Shodh Sangam Patrika
E-ISSN: 3049-0707, Volume 3 | Issue 1 | (Jan – Mar 2026)

मनीषा कुलश्रेष्ठ के कथा साहित्य में स्त्री अस्मिता और यथार्थबोध : कहानियों और उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. शची सिंह [1], योगिता वर्धन [2]
[1] आचार्य, हिंदी विभाग, गवर्नमेंट कॉलेज, सिरोही
[2] शोधार्थी, मोहन लाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर

शोध सार

प्रस्तुत शोध-पत्र मनीषा कुलश्रेष्ठ के कथा साहित्य में स्त्री अस्मिता और यथार्थबोध के बहुआयामी स्वरूप का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। समकालीन हिंदी साहित्य में मनीषा कुलश्रेष्ठ एक ऐसी लेखिका के रूप में उभरी हैं जिन्होंने स्त्री को एक विचार, संवेदना और जीवंत सत्ता के रूप में प्रस्तुत किया है। उन्होंने अपने कथा साहित्य में स्त्री के अनुभवों को प्रेम, यौनिकता, मातृत्व, अकेलेपन, मानसिक स्वतंत्रता और सामाजिक विसंगतियों जैसे विविध पक्षों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। यह अध्ययन दर्शाता है कि जहाँ उनकी कहानियाँ प्रतीकात्मकता, संवेदनशीलता और तीव्रता लिए हुए हैं वहीं उनके उपन्यास वैचारिक गहराई, ऐतिहासिक संदर्भ और सांस्कृतिक विमर्श के साथ एक विस्तृत दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं। अतः यह शोध-पत्र मनीषा कुलश्रेष्ठ के कथा साहित्य को स्त्री मुक्ति और अस्मिता की खोज के साथ समकालीन समाज की विसंगतियों के एक गंभीर और सूक्ष्म विश्लेषण के रूप में भी रेखांकित करता है।

बीज शब्द- स्त्री अस्मिता, यथार्थबोध, मातृत्व, यौनिकता, अकेलापन, मानसिक स्वतंत्रता, स्त्री-पुरुष संबंध, सामाजिक विसंगति, पारिवारिक द्वंद्व

मूल आलेख-

हिंदी साहित्य का आधुनिक परिदृश्य जब स्त्री अस्मिता और यथार्थबोध की दृष्टि से देखा जाता है तो मनीषा कुलश्रेष्ठ जैसे रचनाकारों की भूमिका अत्यंत निर्णायक प्रतीत होती है। स्त्री-जीवन के बहुआयामी अनुभव, उसकी सामाजिक स्थिति, मानसिक द्वंद्व और आत्म-संघर्ष को लेकर जो गहन सृजनात्मकता उनके कथा साहित्य में दृष्टिगोचर होती है वह वैचारिक क्रांति का सूत्रपात करती है। मनीषा कुलश्रेष्ठ की कहानियाँ और उपन्यास उन स्त्रियों की कथा हैं जो प्रतिकूलताओं के मध्य आत्मसम्मान और निर्णय की चेतना से समृद्ध हैं। उनकी स्त्रियाँ परंपरा और आधुनिकता के बीच फंसी हुई किंतु जड़ता को तोड़ने वाली साहसी और विवेकशील स्त्रियाँ हैं। यह लेखन स्त्री के वस्तुपरक चित्रण से आगे बढ़कर उसकी आत्मपरक अनुभूतियों को स्वर देता है। इन रचनाओं में स्त्री समाज को बदलने वाली चेतस सत्ता के रूप में उभरती है।

"मनीषा कुलश्रेष्ठ जी की रचनाओं में स्त्री मनोविज्ञान को बहुत ही प्रभावित ढंग से उकेरा गया है। एक ओर स्त्री के आधुनिक परिवेश को लेखिका ने अपना केन्द्र बिन्दु माना तो दूसरी ओर सामजिक यथार्थ से जूझती स्त्री, स्वावलम्बी स्त्रियों का वर्णन तथा यौन शोषण का दर्द बखूबी प्रस्तुत किया है। समाज में रहकर किसी भी पात्र को आत्मसात कर अपनी रचना का रूप देकर लेखिका ने उपन्यास एवं कहानियों में जो कुछ भी रचा है, वह सराहनीय है।"[1] भारतीय समाज की बहुस्तरीय संरचना, उसमें व्याप्त वर्गभेद, जातिभेद, लैंगिक विषमताएँ आदि का यथार्थ चित्रण मनीषा कुलश्रेष्ठ के कथा साहित्य में बेहद स्वाभाविक रूप से समाहित है।

उनकी कहानियों में जहाँ स्त्री अपने परिवेश से मुठभेड़ करती है, वहीं उनके उपन्यासों में यह टकराव और भी गहराई लिए हुए दिखाई देता है। शिगाफ़, पंचकन्या, अनामा, किरदार, स्वप्नपाश आदि उपन्यासों में स्त्री का आत्मसंघर्ष और अस्मिता

की तलाश जिस रूप में सामने आती है वह समकालीन विमर्श को एक नया आयाम देती है। उनका कथा साहित्य सामाजिक ढाँचों के भीतर स्त्री के अस्तित्व की पहचान और स्वीकार्यता की प्रक्रिया को रेखांकित करता है। जब हम उनकी कहानियों और उपन्यासों का तुलनात्मक विश्लेषण करते हैं तो यह स्पष्ट होता है कि वे दोनों विधाओं में एक समान प्रभावशीलता के साथ स्त्री की चेतना और यथार्थ को प्रस्तुत करती हैं।

मनीषा की नायिकाएँ न सामाजिक मर्यादाओं की केवल अनुगामी हैं, न ही वे अराजक विद्रोहिनी हैं वरन् वे अपने भीतर की परतों को समझती हैं और अपने जीवन की दिशा तय करने का साहसिक स्वत्व अपने भीतर खोजती हैं। “वर्तमान युग में स्त्री विचार-विमर्श का मुद्दा बनी हुई है। स्त्री सशक्तिकरण को लेकर अनेक योजनाएँ बनाई जा रही है। स्त्री को शिक्षा देने के साथ-साथ नौकरी के भी अवसर प्रदान किये जा रहे हैं ताकि स्त्री स्वावलंबी बन प्रगति की ओर अग्रसर हो सके। शायद ही आज ऐसा कोई क्षेत्र होगा, यहाँ स्त्री न पहुँची हो। रिक्शा चलाने से लेकर हवाई जहाज चलाना, रसोईघर से लेकर सरकार चलाने तक, मजदूरी करने से लेकर प्रधानमंत्री बनने तक नारी ने अपनी उपस्थिति दर्ज करवायी है। शिक्षा के जरिये स्त्रियों में चेतना आई है परन्तु अब भी अधिकतर महिलाएँ अपने अधिकारों से वंचित है।”[2]

मनीषा कुलश्रेष्ठ के कथा साहित्य में जो स्त्रियाँ उपस्थित हैं, वे अपने समय की प्रतिनिधि होते हुए भी कालातीत चिंता की संवाहिका बनती हैं। वे अपने निजी अनुभवों में से सामाजिक यथार्थ की परतें खोलती हैं। देह, मातृत्व, अकेलापन, यौनिकता, प्रेम, स्मृति, संबंध और विरोध जैसे अनुभव उनके पात्रों के माध्यम से साहित्य में प्रवेश करते हैं। यह लेखन किसी भी प्रकार की एकरेखीय विचारधारा को अस्वीकार करता है। उदाहरण के लिए शिगाफ़ उपन्यास की नायिका, जो सांस्कृतिक पहचान और मुस्लिम समाज की पृष्ठभूमि में अपने अस्तित्व की दरारों से जूझती है, केवल धार्मिक या सामाजिक स्तर पर नहीं बल्कि आत्मसत्ता के स्तर पर भी संघर्षरत दिखाई देती है।

मनीषा कुलश्रेष्ठ की कहानी कालिंदी नारी जीवन के कटु यथार्थ का कच्चा चिट्ठा पेश करती है। जीवन चलाने की मजबूरी के खातिर देह व्यापार में लगी औरतों के जीवन के मार्मिक प्रसंगों को कहानी बेहतरीन तरीके से बयाँ करती है। जमुना सलुंके उस समस्त नारी जाति की कड़वी दास्तान कहती है, जो देह व्यापार में लिप्त होकर जीवन के जरूरी कामों के लिए दो-दो पैसे जोड़ती हैं। पीली इमारतों की एक श्रृंखला, दलाली करते प्रेमी या पति, सीलन व बदबूदार गलियाँ और औरतों के जिस्म उनकी बदहाली की दास्तान है। यह एक ऐसी औरत की कड़वी कथा है, जहाँ कस्टमर का आना भी डरावना है और न आना भी।

लेखिका लिखती है कि "कस्टमर शब्द उस गली के हमउम्र बच्चों के बीच एक डरावना शब्द था। एक पिशाच जो औरतों का गला दबाया करता था। औरतें उसकी गिरफ्त में कराहतीं..... थीं। एक पिशाच जिसके आने से... कभी कटोरदान में रोटी कम पड़ जाती थीं या फिर... बचती तो सब्जी या शोरबे के बिना ही खानी होती थीं।" यहाँ हम उस मजबूरी को स्पष्टतः समझ सकते हैं कि पेट की आग के आगे मनुष्य को और यहाँ खासतौर पर स्त्री को कितने कड़वे घूंट पीने पड़ रहे हैं।”[3]

जबकि मनीषा की कहानियाँ जैसे- कुहासा, सिम्मल के फूल, केयर ऑफ स्वात घाटी आदि में स्त्रियाँ अपने आस-पास की बौद्धिक, मानसिक और भावनात्मक सीमाओं को पहचानते हुए उनसे मुक्ति की आकांक्षा को जन्म देती हैं। यह मुक्ति केवल बाह्य संरचनाओं से नहीं है बल्कि अपने भीतर जमी हुई जड़ताओं से भी है। लेखिका इस मुक्ति को कोई घोषणात्मक स्वर नहीं देतीं बल्कि उसे बेहद संवेदनशील, निजी और मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया के रूप में प्रस्तुत करती हैं। यह प्रक्रिया कभी आत्म-स्वीकृति से गुजरती है, कभी प्रेम की अस्वीकृति से तो कभी समाज द्वारा ठुकराए जाने की पीड़ा को आत्मबल में बदलने से।

लेखिका ने साहित्य को वह भाषा दी है जिसके माध्यम से स्त्री अपने अनुभवों को बिना किसी दबाव, शर्म या औचित्य के भय के अभिव्यक्त कर सकती है। “मनीषा जी प्रचलित कथाकारों में से एक हैं। इनकी कहानियों में विचारधारा और प्रतिबद्धता इस प्रकार विन्यस्त है कि कहानी का विन्यास विचारधारा और प्रतिबद्धता की आभा से ग्रस्त नहीं होता। मनीषा जी ने स्त्री

को अग्रणी मानकर अपने उपन्यास तथा कहानियों में उनको केन्द्र में रखा है। मनीषा जी स्त्रियों के विषय में इतना गहन सोचती हैं कि लगता है कि जैसे उनका साहित्य स्त्रियों के लिए ही सृजित होता है। मनीषा कुलश्रेष्ठ समय, समाज और उसके विद्रूपों तथा चुनौतियों के प्रति भी सचेत रहती हैं। उनके द्वारा रचित कहानियाँ स्त्री अस्तित्व के पक्ष में हमेशा खड़ी हैं और उसके सामाजिक शोषण की भयावह परिणतियों पर भी संवेदनशील है।"[4]

मनीषा कुलश्रेष्ठ की रचनाओं में यथार्थबोध व्यक्ति की आंतरिक संरचना और उसके अस्तित्व के प्रश्नों तक विस्तार पाता है। लेखिका ने स्त्री के भीतर के डर, संशय, असुरक्षा और आत्मसंघर्ष को बेहद संवेदनशीलता के साथ उकेरा है। यथार्थ यहाँ मात्र बाह्य परिवेश की अनुकृति नहीं है, बल्कि वह स्त्री की चेतना के उन अंधेरे कोनों में व्याप्त है जहाँ समाज और संस्कृति का द्वंद्व उसकी निजता में हस्तक्षेप करता है। यही कारण है कि मनीषा की कहानियों में स्त्री न तो दया की पात्र है और न ही सिर्फ प्रतिरोध का प्रतीक। वह विचारशील, जिज्ञासु, अनुभव से परिपक्व और निर्णय की स्थिति में पहुँच सकने वाली प्रौढ़ चेतना का प्रतिनिधित्व करती है। यह स्त्री अपने सीमित जीवन-क्षेत्र में रहते हुए भी अपने अंतस की यात्रा करती है और वहां से यथार्थ की नई व्याख्या लेकर लौटती है।

अनामा की नायिका ऐतिहासिक बोध और समकालीन मानसिकता के द्वंद्व से जूझती है। वह अपने अतीत को केवल स्मृति नहीं मानती, बल्कि वर्तमान की संरचना में उसकी निर्णायक भूमिका को स्वीकार करती है। यह स्वीकृति यह दर्द, संदेह और विस्थापन से होकर आती है। लेखिका ने इस विस्थापन को केवल भौगोलिक नहीं बल्कि मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक भी माना है। केयर ऑफ स्वात घाटी कहानी में युद्ध की पृष्ठभूमि और स्त्री की निजी अनुभूतियों का जो ताना-बाना बुना गया है वह केवल सामाजिक दस्तावेज नहीं वरन् भावनात्मक और वैचारिक परतों का परिशीलन भी है। यहाँ स्त्री की पीड़ा युद्ध के शोर से अलग एक मौन चीख की तरह गूंजती है, जो मनीषा के लेखन में संप्रेषण का सबसे सशक्त माध्यम बनकर उभरता है।

"मनीषा कुलश्रेष्ठ की कृतियों में एक ओर जहाँ आधुनिक मूल्यों की प्रतिष्ठा है तो वहीं दूसरी ओर रूढ़ियों का बहिष्कार भी है। दाम्पत्य-जीवन, पारिवारिक-जीवन आदि के उत्कृष्ट चित्रण के साथ ही साथ लेखिका अपनी रचनाओं में सामाजिक, राजनीतिक, साम्प्रदायिक, नारी-चेतना जैसे विषयों को भी बखूबी चित्रित करती हैं। उनकी कहानियाँ विभिन्न रंगों से रंगी हुई है जैसे- 'महानगर बोध की कहानी', 'स्त्री मन की कहानी', 'भटकते हुये लोगों के निपट एकांत की कहानी', 'फ़ौजी पृष्ठभूमि की कहानी', 'आदिवासी छात्रावास में हो रहें भ्रष्टाचार और यौन शोषण की कहानी', 'विलुप्त होती लोक कलाओं की कहानी', 'एक बेटी का अपने पिता द्वारा हो रहे बलात्कार की कहानी आदि।"[5]

मनीषा कुलश्रेष्ठ के कथा साहित्य में स्त्री अस्मिता का एक महत्वपूर्ण पक्ष उसकी यौनिकता और प्रेम के साथ उसके संबंध को लेकर सामने आता है। पारंपरिक समाज में स्त्री-देह को मर्यादा, नियंत्रण और नैतिकता के उपकरण के रूप में देखा गया है, जबकि मनीषा की स्त्रियाँ इस दृष्टिकोण को चुनौती देती हैं। उनका लेखन यह स्पष्ट करता है कि देह केवल सामाजिक दायित्वों की पूर्ति का साधन नहीं बल्कि स्त्री की चेतना, आत्मबोध और अनुभवों का सक्रिय हिस्सा है। इस दृष्टि से मनीषा की रचनाएँ स्त्री के यौनिक अनुभवों को अपराधबोध या पापबोध से मुक्त कर उसे स्वाभाविक मानवीय अनुभूति के रूप में प्रस्तुत करती हैं।

प्रार्थना के बाहर की स्त्री पात्र न केवल शारीरिक संबंधों को लेकर निर्भीक है बल्कि वह संबंधों की अस्थिरता, अस्वीकृति और स्वीकृति तीनों को समान आत्मबल के साथ स्वीकारती हैं। "हिन्दी कहानी की दुनिया में जिन युवा लेखकों ने जोर से दस्तक दी है उनमें मनीषा कुलश्रेष्ठ शामिल हैं। मनीषा जी ने अपने कथा साहित्य में स्त्री की हर तरह की स्थिति, परिस्थिति का वर्णन किया है। स्त्री सामाजिक, आर्थिक, मानसिक एवं राजनैतिक पहलुओं पर शोषित होती चली है और पग-पग स्त्री के आत्मसम्मान, स्वाभिमान को चोटिल किया गया है।"[6]

मनीषा कुलश्रेष्ठ की कहानियों और उपन्यासों में प्रेम का स्वरूप भी परंपरागत सीमाओं से परे है। यह प्रेम एकतरफा समर्पण, त्याग या वियोग की नाटकीयता से रहित होकर आत्मसम्मान और भावनात्मक समानता की ज़मीन पर खड़ा होता है। सिम्मल के फूल की नायिका प्रेम में असुरक्षित होकर भी भयभीत नहीं होती बल्कि उसे अपने आत्मविकास की दिशा में एक अनुभव की तरह ग्रहण करती है। स्त्री-पुरुष संबंधों की विडंबनाओं, वर्जनाओं और विसंगतियों को लेकर लेखिका ने अत्यंत संतुलित और गहराई से विचार किया है। उनका लेखन किसी एक लिंग के पक्ष में जाकर अन्य का खंडन नहीं करता बल्कि वे उस असंतुलन को पहचानती हैं जो स्त्री के पक्ष में प्रतिकूल सामाजिक संरचना रचता है।

मि. वॉलरस कहानी में नायिका अपने अस्तित्व को स्वीकारते हुए अंततः कहती है- तुमने गलत लड़की को चुन लिया। मुझे ही क्यों चुना इतनी लड़कियों में से... तुमसे तो कोई भी आकृष्ट होती। तुम्हारे चेहरे से नहीं मि. वॉलरस तुम्हारे पावरफुल होने से। क्या मैं सस्ती दिखी, क्या मैं श्रापित थी... मैं वो नहीं जो तुम चाहते थे.... मैं तुम्हारी लाल-पीली आँखें अब नहीं झेल पाऊँगी। मैं अलग हूँ। मैंने तुम्हे निराश किया बच्चा ना पैदा करके, तो मुझे छोड़ दो अब... मेरी स्मृतियाँ और ग्लानि मुझे खा जाए उससे पहले।"[5]

लेखिका की स्त्री पात्र पुरुष से उस सम्बन्ध की पुनर्परिभाषा चाहती हैं जहाँ समानता, संवेदना और स्वायत्तता की गुंजाइश हो। उनके लेखन में विवाह संस्था का भी आलोचनात्मक परीक्षण मिलता है। विवाह को वे सामाजिक सुरक्षा का माध्यम नहीं वरन् संबंधों की संवेदनशीलता और पारस्परिक गरिमा का क्षेत्र मानती हैं। यदि विवाह स्त्री की आत्मा को कुचलता है तो वह उसे त्यागने का अधिकार भी प्राप्त करती है। स्त्री की यौनिकता और प्रेम के संबंध में लेखिका की दृष्टि संकोचहीन और मानवीय है। वे देह को कामना से जोड़ते हुए भी उसे केवल भौतिक न बनाकर उसकी अनुभूति, उसकी पीड़ा और उसकी गरिमा के स्तर पर ले जाती हैं। इस दृष्टिकोण से उनका लेखन स्त्री के अस्तित्व को एक समग्र इकाई के रूप में देखने की दिशा में आगे बढ़ता है।

केयर ऑफ स्वात घाटी कहानी में मनीषा कुलश्रेष्ठ ने विवाहित कामकाजी नारी की समस्या का चित्रण किया है जहाँ उसका पति विनय उसे नाटक की रिहर्सल ना घर के बाहर करने देता है ना ही घर में। कहानी में गार्गीबनी सुधा का चित्रण हुआ है। वह कहती है- "नाटक की घोषणा हो गयी है और यह तक की टिकट तक बिक चुके है। मेरा मुख्य रोल है। विनय प्लीज। विनय कहता है- "अच्छा घंटो बाहर डोलने का बहाना ढूंढ लिया है... तो क्या करू? घर और बच्चे अकेले न छूटे इसलिए हमने यहां रिहर्सल की।"[6]

मनीषा कुलश्रेष्ठ के कथा साहित्य में मातृत्व, अकेलापन और मानसिक स्वतंत्रता जैसे विषयों को भी गंभीरता और संवेदनशीलता के साथ चित्रित किया गया है। पारंपरिक दृष्टिकोण में मातृत्व को स्त्री की चरम पूर्णता के रूप में प्रस्तुत किया गया है जहाँ उसकी देह, भावनाएँ और सामाजिक भूमिकाएँ एक विशेष प्रकार की ममता के खाँचे में बाँध दी जाती हैं। मनीषा इस दृष्टिकोण को पुनः परिभाषित करती हैं। उनके यहाँ मातृत्व कोई पवित्रता का दैवी रूप नहीं बल्कि एक भावनात्मक, शारीरिक और मानसिक अनुभव है जो स्त्री को विभिन्न प्रकार के द्वंद्वों से गुजरते हुए अपनी पहचान और अस्तित्व से जोड़ता है।

स्वप्नपाश उपन्यास में डॉ. सिंह गुलनाज से अपने अस्तित्व को पहचानने को कहता है- 'वादा करो अब कलाई काटने, फिनाइल पीने, नींद की गोलियाँ खाने जैसी हरकत नहीं करोगी। मरने में क्या रखा है? सच पूछो तो जन्मना या जन्म देना मुश्किल होता है। कभी माँ बनकर देखो, कभी मरने का सोचोगी तक नहीं। क्या मैं माँ बन सकती हूँ? हाँ, मैं चाहता हूँ। तुम वह सब बनो जो हर लड़की बनती है। प्रेमिका, पत्नी, माँ फिर दादी बनो, एक पूरी सुंदर जिंदगी जियो।"[7]

इस रचना-संसार में अकेलापन भी एक महत्वपूर्ण अस्तित्ववादी स्थिति के रूप में उभरता है। यह एक विचारशील स्थिति है जहाँ वे स्वयं से संवाद करती हैं, अपने निर्णयों की समीक्षा करती हैं और अपने भीतर से जीवन की पुनर्रचना करती हैं।

पंचकन्या उपन्यास में नायिकाओं का यह अकेलापन विविध रूपों में जैसे- प्रेम के अभाव, सामाजिक वर्जनाओं, आत्मनिर्णय की कीमत के रूप में प्रकट होता है। यह अकेलापन विक्षिप्त नहीं करता बल्कि एक ऐसी दृष्टि देता है जो संबंधों, जीवन और समाज को अलग कोण से देखने की क्षमता रखती है।

स्वप्नपाश उपन्यास में नायिका गुलनाज़ के नाना उसे अपने अस्तित्व अस्मिता व यथार्थ का बोध करवाते हुए कहते हैं— "हम सब मनुष्य जो हैं, हम अपने-अपने ईश्वर बनाते हैं भ्रम के। तुम अकेली नहीं हम सभी स्किज़ोफ्रेनिक हैं। हम सब अपने दिमागों के अधीन हैं। हमारे दिमाग ईश्वरों का निर्माण करते हैं फिर हम उन्हीं ईश्वरों से संघर्ष करते हैं, ये ईश्वर सामूहिक स्किज़ोफ्रेनिया से ग्रसित समाजों के दिमागों को जकड़े हैं। तुम इस जकड़न से खुद ही निकल सकते हो।"[8]

मनीषा कुलश्रेष्ठ के कथा साहित्य में स्त्री अस्मिता की सबसे जटिल प्रस्तुति उन द्वंद्वात्मक संदर्भों में होती है जहाँ स्त्री परंपरा और आधुनिकता के बीच फंसी हुई होती है। एक ओर स्त्री के समक्ष उसकी सामाजिक भूमिका है जो उसे 'पत्नी', 'माँ', 'बहू' जैसे खाँचों में बाँधती है दूसरी ओर वह स्वयं को इन सीमाओं से परे किसी नई पहचान की खोज में देखती है। किरदार उपन्यास की नायिका पारिवारिक और वैवाहिक तानेबानों में उलझी हुई स्त्री है जो धीरे-धीरे यह समझने लगती है कि उसका जीवन किसी अन्य की इच्छा के अनुसार नहीं चल सकता। वह स्वयं अपने लिए निर्णय लेती है, भले ही उसके परिणाम उसे अकेलापन, असुरक्षा या सामाजिक आलोचना की ओर ले जाएँ। "नारी पर धर्म ने सदियों से अपना शिकंजा जकड़ा हुआ है। चाहे आज की नारी पढ़ी-लिखी क्यों न हो परन्तु फिर भी उसका शोषण हो रहा है। खासकर विधवा नारियों के लिए तो धर्म ने उनका जीवन अभिशप्त बना दिया है। मनीषा कुलश्रेष्ठ जी ने अपनी कहानी रंग-रूप-रस-गंध में विधवा स्त्री की विडम्बना को व्यक्त किया है।"[9]

रक्स की घाटी और शब-ए-फितबा में धर्म के नाम पर घाटी की नारी में खौफ पैदा कर दिया है "तुमने कभी सोचा है? नाचना-गाना धर्म के खिलाफ कैसे हो सकता है? वह फिर पूछता है। मैं क्या जवाब दूँ? औरतों और बच्चियों को बहला-फुसलाकर पढ़ाते हुए मैं थक गयी हूँ... उन्हें क्या-क्या नहीं समझाती, यही मजहबी कानून और इसका सही मतलब मगर सुननेवालियों के कान बहरे हैं और आँखें उजाड़ जबाने उमेठ दी गयी हैं... मेरी हिम्मत टूट रही है अब।"[10]

मनीषा कुलश्रेष्ठ के कथा साहित्य में कहानियों और उपन्यासों का तुलनात्मक मूल्यांकन यह दर्शाता है कि लेखिका दोनों ही विधाओं में समान सृजनात्मक गहराई, वैचारिक दृढ़ता और स्त्रीवादी दृष्टिकोण की सघनता बनाए रखती हैं। कहानियाँ जहाँ तीव्र भावनात्मक विस्फोट, प्रतीकों और क्षणिक अनुभूतियों की सघनता के साथ पाठक को गहरे स्तर पर झकझोरती हैं, वहीं उपन्यास व्यापक पृष्ठभूमि, ऐतिहासिक सन्दर्भों और सामाजिक संरचनाओं के भीतर स्त्री की चेतना को विस्तार देते हैं। उनकी कहानियों में संवेदना की तीव्रता, भाषा की धार और बिंबों की सघनता पाठक को कुछ ही पंक्तियों में स्त्री के अंतरंग संसार में खींच लेती है। नामर्दी की दवा वाया लेडीज़ सर्कल या सिम्मल के फूल जैसी कहानियाँ नारी देह, समाज और अस्मिता को तीखे किन्तु संतुलित स्वर में प्रस्तुत करती हैं। जबकि उनके उपन्यास स्त्री के अनुभवों को बहुआयामी संदर्भों में रखकर उसका मूल्यांकन करते हैं। शिगाफ़ और अनामा जैसे उपन्यास जहाँ स्त्री की सांस्कृतिक स्मृति, यौनिकता, धर्म, जाति और पहचान के प्रश्नों को उद्घाटित करते हैं, वहीं पंचकन्या और स्वप्नपाश जैसी रचनाएँ स्त्री के मानसिक अकेलेपन, मातृत्व की दुविधाओं और संबंधों की विफलताओं को अधिक आत्मीय दृष्टि से उभारती हैं। मनीषा का उपन्यास साहित्य केवल स्त्री के पक्ष में खड़ा नहीं होता वह पुरुष को भी उस विमर्श में सम्मिलित करता है जहाँ दोनों की असुरक्षाएँ, सीमाएँ और आकांक्षाएँ एक-दूसरे के यथार्थ को प्रभावित करती हैं।

शैली की दृष्टि से कहानियाँ अधिक प्रतीकात्मक, बिंबात्मक और काव्यात्मक भाषा में रची गई हैं। उनकी भाषा में गंध, रंग, ताप और संवेदना का गहरा समावेश है। वहीं उपन्यासों में यह भाषा अधिक कथात्मक, विचारशील और विमर्शात्मक हो जाती है। यह बदलाव केवल विधागत अपेक्षा नहीं है, यह लेखिका की शिल्पगत सजगता और विषय के अनुकूल भाषिक

विन्यास की कुशलता को दर्शाता है। मनीषा का साहित्य स्त्री-जीवन के अदृश्य, अनकहे और अनचिह्नित पहलुओं को भाषा देता है। उनकी रचनाएँ पाठक को स्त्री की आंतरिक चेतना में प्रवेश करने का अवसर देती हैं जहाँ अस्मिता कोई पूर्वनिर्धारित सच्चाई नहीं वरन् एक सतत खोज है।

निष्कर्ष-

तुलनात्मक दृष्टि से यह स्पष्ट होता है कि मनीषा कुलश्रेष्ठ का कथा साहित्य स्त्रीवादी विमर्श के मानकों को केवल दोहराता नहीं बल्कि उन्हें चुनौती और विस्तार भी देता है। वे स्त्री को जटिल, विचारशील और आत्मनिर्णय की समर्थ सत्ता के रूप में रचती हैं। यही कारण है कि उनकी कहानियाँ क्षणों को पकड़कर अनुभव की गहराई तक ले जाती हैं और उनके उपन्यास समय की विस्तृत धारा में स्त्री के आत्मबोध की यात्रा को पूर्णता की ओर ले जाते हैं। लेखिका ने कहानियों और उपन्यासों में भिन्न-भिन्न तकनीकों और शिल्प के माध्यम से स्त्री अस्मिता और यथार्थबोध को बहुत ही सशक्त रूप में प्रस्तुत किया है। कहानियाँ जहाँ अधिक तीव्र, प्रतीकात्मक और बिंबात्मक हैं, वहीं उपन्यासों में विषयवस्तु को विस्तार, गहराई और वैचारिक परिपक्वता प्राप्त होती है। उनके कथा साहित्य ने हिंदी साहित्य को विचारधारा और संवेदना के स्तर पर समृद्ध किया है और यही उनके रचनात्मक अवदान को कालजयी बनाता है। यह शोध-पत्र मनीषा कुलश्रेष्ठ के कथा साहित्य में उपस्थित स्त्री अस्मिता की अनुभूतियों और सामाजिक यथार्थ की प्रस्तुति को आलोचनात्मक दृष्टि से प्रस्तुत करता है।

संदर्भ सूची

1. शर्मा शान्ति ; शर्मा राजरानी। (2020)। मनीषा कुलश्रेष्ठ की कहानियों में स्त्री विमर्श : एक अध्ययन। शोध समागम। ISSN- 2581-6918 (Online), वाल्यूम-03, ईश्यू-04, अक्टू.-दिस., पृ. 1254
2. शर्मा शान्ति ; शर्मा राजरानी। (2020)। मनीषा कुलश्रेष्ठ की कहानियों में स्त्री विमर्श : एक अध्ययन। शोध समागम। ISSN- 2581-6918 (Online), वाल्यूम-03, ईश्यू-04, अक्टू.-दिस., पृ. 1254
3. नंदवाना, नवीन। (2020) जीवन के कटु यथार्थ से रू-ब-रू कराती कहानियाँ (विशेष संदर्भ : मनीषा कुलश्रेष्ठ का कहानी संग्रह 'कुछ भी तो रूमानी नहीं'),। समवेत। (ISSN : 2321-6131), जुलाई-दिसम्बर, , पृ. 114
4. शर्मा शान्ति ; शर्मा राजरानी। (2020)। मनीषा कुलश्रेष्ठ की कहानियों में स्त्री विमर्श : एक अध्ययन। शोध समागम। ISSN- 2581-6918 (Online), वाल्यूम-03, ईश्यू-04, अक्टू.-दिस., पृ. 1256
5. कुलश्रेष्ठ, मनीषा। (2014)। अनामा। दिल्ली : वाणी प्रकाशन। पृ. 43
6. कुलश्रेष्ठ, मनीषा। (2012)। केयर ऑफ स्वात घाटी। जयपुर : बोधी प्रकाशन। पृ. 10
7. कुलश्रेष्ठ, मनीषा। 2017। स्वप्नपाश। दिल्ली : किताबघर प्रकाशन। पृ. 9
8. कुलश्रेष्ठ, मनीषा। (2014)। अनामा। दिल्ली : वाणी प्रकाशन। पृ. 70
9. पाण्डेय, वंदना : मनीषा कुलश्रेष्ठ की कहानियों में विषय-वैविध्य, अपनी माटी, त्रैमासिक ई-पत्रिका, (ISSN 2322-0724) अंक- 35-36, जनवरी-जून, 2021
10. कुलश्रेष्ठ, मनीषा। 2017। स्वप्नपाश। दिल्ली : किताबघर प्रकाशन। पृ. 104